Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 10-03-2025, Accepted: 09-04-2025, Published: 25-04-2025
Volume 6, Issue 1, 2025, Page No. 1-3

'बीस बरस' और गाँव का बदलता परिदृश्य

रीता गुप्ता
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, रोनो हिल्स दोईमुख, अरुणाचल प्रदेश, भारत

सारांश
रामदरश मिश्र हिन्दी साहित्य के एक प्रतिष्ठित साहित्यकार है। उनका जन्म 15 अगस्त सन् 1924 को उत्तर प्रदेश के कछार अंचल के गाँव 'डुमरी' में हुआ है। उनके जीवन की शुरूआत गाँव में ही हुई और वही पर उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। उनके कवि हृदय का बीजारोपण गाँव के वातावरण में ही उदय हुआ। आगे की पढ़ाई के लिए उन्होंने बनारस की धरती पर कदम रखा और वही पर उनके साहित्यिक लेखन का विकास हुआ। बनारस के वातावरण ने उनके कवि हृदय का विस्तार किया। बनारस से गुजरात और फिर दिल्ली जैसे महानगर में उनके लेखन कौशल का विकास होता ही चला गया।
रामदरश मिश्र भले ही शहरों में आकर बस गए हो परन्तु अपने गाँव के प्रति प्रेम और मोह से कभी दूर नहीं हो सके। आज भी गाँव और ग्रामीण समाज उनके भीतर बसा हुआ है, उनके कविता, कहानी, उपन्यास इत्यादि में गाँव मुखर रूप से दिखता है। उनके ही शब्दों में–
"बस गया हूं दोस्तों, दिल्ली शहर के बीच यों तो।
गाँव मेरा अब भी वहीं हां वही, गोरखपुर जिला है।"[1]
गाँव का जो परिदृश्य समय के साथ परिवर्तित हुआ है, उसका यथार्थ चित्रण उनके साहित्य में दिखता है। वे समय के साथ चलने वालों में से है, जैसे–जैसे समाज बदला है उनके साहित्य में भी परिवर्तन आया है।

मूल शब्दः खपरैल, नेरेटर, कब्रिस्तान, औद्योगिकीकरण, वैश्वीकरण, होली, सम्मति, आस्था, लोक–विश्वास, अन्तरजातीय–विवाह, आत्मनिर्भर

शोध आलेख–
रामदरश मिश्र स्वयं अपने उपन्यासों के संदर्भ में कहते हैं कि उपन्यास लिखने की प्रेरणा उन्हें 'फणीश्वरनाथ रेणु' के 'मैला आंचल' से मिली है। उपन्यास को पढ़कर उनके मन में विचार आया कि इस प्रकार के उपन्यास तो वे भी अपने गाँव, समाज और संस्कृति के संदर्भ में लिख सकते हैं। उसी से प्रभावित होकर उन्होंने अपना पहला उपन्यास सन् 1961 में 'पानी के प्राचीर' लिखा। उसके बाद 'जल टूटता हुआ', 'बीच का सफर', 'सूखता हुआ तालाब', इत्यादि उपन्यासों का सिलसिला चलता ही गया। उनके लेखन का मुख्य केंद्र हमेशा से गाँव रहा है, कहीं–कहीं शहर और गाँव के बीच सामंजस्य दिखाई पड़ता है। उदाहरण के तौर पर उपन्यास 'बिना दरवाजे का मकान' देखा जा सकता है जहां पर गाँव के परिदृश्य से कथा शहर तक आती है। इसी तरह उनके उपन्यासों में ग्रामीण अंचल के साथ शहरों का भी चित्रण मिलता है।
उपन्यास 'बीस बरस' पूर्ण रूप से ग्रामीण समाज का बदलता हुआ परिवेश पर केन्द्रित है। यह रिपोर्ताज शैली में लिखा गया है। गाँव का नाम सुनते ही हमारे मन में तरह–तरह के दृश्य उभर पड़ते है। चारों तरफ पेड़– पौधे से लबालब हरियाली, खेत–खलियान, बगीचे, जिसमें तरह–तरह के फल–फूल लदे हो। जगह–जगह पर खपरैल के घर, खेतों में किसान मेहनत कर रहे हैं, घर के ओसारे में या फिर चौराहे में गाँव के बुजुर्ग बैठकर सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों में चर्चा–परिचर्चा कर रहे हो। सभी के मन में गाँव का एक सामान्य दृश्य इसी तरह से उभर कर आता है। गाँव जहाँ लोक–संस्कृति से भरा पूरा माहोल हो।
इस उपन्यास में इन सबसे अलग एक अत्याधुनिक गाँव का चित्रण दिखाई पड़ता है। उपन्यास का नायक दामोदर 'नेरेटर' की भूमिका में सामने आता है। 'बीस बरस' के बाद अपने बचपन के गाँव का सपना लेकर गाँव, परिवार के पास त्योहारों के दिनों में घर लौट कर आता है। दामोदर गाँव की बदलती हुई छवि को देखकर दुखी तथा हैरान होता है। वह देखता है कि गाँव की 'शक्ल–सूरत में निश्चय ही कुछ बदलाव आया है। सड़क खड़ंजा ही सही, सड़क तो है और यह सड़क गाँव के बीच से जा रही थी। छोटे–मोटे वाहन सड़क पर आ–जा रहे थे। किसी–किसी गाँव के पास हाई स्कूल बन गये थे जिससे सड़क पर तमाम दुकानें खुल गयी थी। चायें की दुकानें तो जगह–जगह दिखाई दे रही थी। गाँव के खपरैल के मकान धीरे–धीरे पक्के मकान में बदल रहे थे। जहां मैंने बगीचे देखे थे वहां ईट के भट्टे सुलग रहे थे। धुएं से आकाश भरा हुआ था। यह देखकर अच्छा लगा कि सरकार के न चाहने के बावजूद लोगों ने बहुत कुछ बदला है, आधुनिक लहर को गाँव में हाँक कर ले आये हैं।'[2] एक समय था जब गाँव के सुनसान रास्ते और नालों के पास से गुजरने में भी डर लगता था। उसके पास कब्रिस्तान बना हुआ था, लोगों के मन में यह विश्वास था कि लोग मरकर बुड़वा बन जाते हैं। वे लोगों को परेशान करते है। बचपन में उस रास्ते पर कितना सन्नाटा था। अब वही सुनसान रास्ते पर कितनी चहल–पहल हो गई, स्कूल खुल गए हैं, दुकानें खुल गई हैं, 'भूतों के भय से भरा यह सुनसान और विषम स्थान मानव निवास के स्तर से एक रौनक में बदल गया है।'[3]
औद्योगिकीकरण तथा वैश्वीकरण का प्रभाव गाँव के वातावरण में दिखने लगा है। गाँव बाजार बन गया है। अब गाँव में कोई बाड़ी बची हुई नहीं है। उसके स्थान पर भट्टों ने अपना स्थान बना लिया है। गाँव में शहरी व्यापारियों का ढेरा लगने लगा हैं। यह देखकर दामोदर दुखी होता है। शहर के गाँव में बसने से गाँव का विकास हो रहा है, पर गाँव की अपनी वास्तविकन संस्कृति एवं छवि ख़त्म हो रही है। गाँव विकसित और परिवर्तित हो रहा है। छोटी–छोटी पक्की सड़क एक गाँव को दूसरे गाँव से जोड़ने लगी है।
दामोदर प्रसन्न है कि वह कितने वर्षों के बाद होली के त्यौहार के समय गाँव में आया है। शहर की भागदौर तथा व्यस्त जीवन के बीच समय निकाल पाना कितना मुश्किल होता है। वर्षों के

बाद अपने बचपन के होली को फिर से गाँव में जीने का मौक़ा उसे मिला है। उसे यह पता नहीं था कि अब गाँव में भी शहरों की तरह त्यौहार नाम मात्र के रह गए हैं। होली एक ऐसा त्यौहार हुआ करता था जिसे लोग महीनों तक मनाते थे। महीनों तक गाँव में फ़ाग गाया जाता था, कबीर गायी जाती थी। बच्चे, बड़े, तथा बुजुर्ग एक साथ इस पर्व को हंसी–खुशी मनाते थे। मजाक मस्ती होती थी खुशहाली छाई रहती थी, परंतु दामोदर आज इस सुनसान तथा मौन हुए गाँव को देखकर दुखी होता है। होली के आते ही प्रेम और उत्साह का रूप दिखने लगता था।'भाभियों और देवरों की लुकाछिपी शुरू हो जाती थी। लेकिन कोई कितना छिपेगा, आखिर भाभियों के पानी और रंग की चपेट में आ ही जाता था।'[4] होली के गीत और कबीर की आवाज चारों ओर सुनाई पड़ती थी। कछार के फागुन और होली की याद लिए लेखक अपने गाँव आया तो था परंतु उदास हो जाता है। वह गाँव के समाज और उसका बदलता हुआ परिदृश्य को देखकर आश्चर्य में पड़ जाता है। गाँव के घरों में अब टी.वी में होली के गीतों को सुनकर लोग आनंद ले रहे है। आखिर गाँव को हुआ किया है। गाँव इतना कैसे बदल गया। वह देखता है कि गाँव में फागुन का महीना है, होली का समय है परंतु लोग अपने खेतों में काम करने में व्यस्त है। किसी के मन में किसी प्रकार से त्यौहार को लेकर उत्साह नहीं बचा है। गाँव में पूस की रात की तरह सन्नाता छायी हुयी है। त्यौहार का उत्सव दिखाई नहीं पड़ रहा, उसके मन में बहुत सारे सवाल आने लगे है, यह तो मेरा अपना गाँव नहीं है। गाँव में जो संस्कृति, परम्परा बची हुई थी क्या अब वह समाप्त होने की कगार पर है। वह भीतर ही भीतर अपने विचारों में डूबा हुआ है कि गाँव इतना कैसे बदल गया।

होली से पहले सम्मति जलाने की प्रथा वर्षों से चली आ रही थी, इसके पीछे हमारे पूर्वजों की यह धारणा थी कि लोग अपने बीच के मनमुटाव को सम्मति के आग में जलाकर खत्म कर दे। अपने मन की बुराइयों को जलती हुई सम्मति में झोंक दे। उनके मन में एक दूसरे के प्रति प्रेम ही बना रहे परंतु आज सम्मति के जलने के स्थान में शांति छायी हुई है। गाँव से निकलते ही सम्मति जलने के खाली स्थान को देखकर दामोदर सन्न रह गया। अब लोगों को लगने लगा है कि सम्मति के आग और धुएं से फसल बर्बाद हो जाएगी। लोग खेतों के बीच सम्मति जलाने की प्रथा को खत्म करने की बात करते हैं। गाँव का जो सामान्य वातावरण था वह पूर्ण रूप से बदल चुका है। अब लोग पूजा–पाठ के नाम पर बड़ी–बड़ी इमारतें बना रहे है। लोक–विश्वास और आस्था जो कभी हुआ करती थी वह अब खत्म होने लगी है, उसके स्थान पर अंधविश्वासों ने अपनी पकड़ बना ली है।

गाँव में अब देसी शराब की दुकानें खुल गई है। गाँव के लड़के वहां जुट कर शराब पीते हैं लड़ते–झगड़ते रहते हैं। गाँव के वातावरण को देखकर लेखक सोचता है कि मेरा गाँव कितना आधुनिक हो गया है। लड़के अब शराब का ही जलपान करते हैं 'बस पी–पीकर इधर–उधर घूमते हैं, लड़कियां छेड़ते हैं, पिटते हैं, पीटते हैं।'[5] अब गाँव का माहौल वैसा नहीं रहा जैसे कई वर्ष पहले था। लेखक की मुलाक़ात माधव–साधो नामक लड़कों से होती है। दोनों लड़के सुबह होते ही शराब के नशे में धूट होकर गाँव भर में भटकते फिरते हैं लड़कियां छेड़ते है।

गाँव में सकारात्मक परिवर्तन भी आया है, आज गाँव की स्त्री आजाद ख्यालों की हो गई है। गाँव में पढ़ी–लिखी स्त्री है जो अपने लिए, अपने हक की लड़ाई के लिए आवाज उठा सकती है। वे केवल पुरुषों के अधीन रहने वाली नहीं रही है। शिक्षा किसी भी क्षेत्र में, किसी को भी क्यों न मिले वह लोगों को जागरूक करने में सहायक होती है। उसका चित्रण हमें इस उपन्यास में दिखाई पड़ता है। दोनों लड़के शराब पीकर लड़की को छेड़ते हैं तो लड़की उसका डटकर सामना करते हुए खड़ी होती है। एक समय था जब गाँव में स्त्रियों को देवी का रूप कहा जाता था। गाँव–समाज में एक घर की बेटी पूरे गाँव की बेटी हुआ करती थी। तो किसी एक घर का नाती, भांजा हो या भाजी, वह पूरे गाँव में उसी रिश्ते से बंधा होता था। परंतु समय के साथ इस रिश्ते में भी परिवर्तन आया है। अब ऐसा हो गया है कि जिस घर की बेटी है केवल उसी घर की बेटी बनकर रह जाती है, गाँव वालों की नही।

माधव–साधो शराब के नशे में लड़की छेड़ने लगता है। दामोदर दोनों लड़कों को फटकार लगाते हुआ कहता है– "बहुत बैगेरत आदमी हो तुम लोग। एक राह चलती लड़की को और वह भी गाँव की भांजी को इस तरह अपमानित कर रहे हो।"[6] दामोदर के कहने पर पवित्रा कहती है कि– "नहीं अंकल, ये मेरा कुछ नहीं कर सकते थे। उन्हें मैंने सबक सिखा दिया होता। किसी दिन सिखा भी दूंगी। अब वे दिन गये जब ऊंची जाति के लफंगे हमें अपने इस्तेमाल की चीज समझते थे?"[7] गाँव की स्त्री अब किसी पुरुष से कम नहीं रही है शिक्षा एक ऐसा हथियार है जो किसी को भी हिम्मत देती है कि वह स्वयं की रक्षा खुद कर सके और अपने लिए आवाज उठा सके।

गाँव में अन्तरजातीय विवाह का भी प्रचलन शुरू हो गया है। एक समय था जब अपने ही जाति में विवाह की प्रथा थी। अपने जाति के बाहर विवाह करने पर जाति से बाहर कर दिया जाता था, समाज से बहिष्कृत किया जाता था। 'शिवरामा विधर्मी लड़की भगा लाया है। किस जाति की है– किस धर्म की है किसी को पता नहीं। वंदना ने अपने स्वभाव, हिम्मत और परिश्रम से सास का मन जीत लिया।'[8] शिवरामा लड़ाई में शहीद हो गया, वंदना विधवा हो गई है। ऐसी स्थिति में गाँव के रीति के अनुसार नियम किया जाने लगा। "उसकी चूड़ी फोड़ी गई, चुप रही, सिंदूर पोंछा गया, चुप रही लेकिन जब उसकी केश कटने की बारी आयी तो जोर से चीख पड़ी– नहीं.... झटक कर खड़ी हो गयी और रोने लगी।.....इन बालों ने क्या किया है कि इन्हें कटवाऊँ।"[9] वंदना आज की सशक्त और जागरूक स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। वह परम्परागत रूप से चली आ रहीं गलत प्रथा का खंडन तथा विरोध करती है। ऐसी स्थिति में एक भजुरामा ही था जिसने अपनी भाभी का साथ दिया और लोगों का विद्रोह किया। गाँव–समाज के लोग देवर–भाभी के रिश्तें पर सवाल उठाने लगे, लोगों का मुँह बंद करने के लिए वंदना ने भजुरामा से शादी कर ली। वंदना एक निर्भय, शक्तिशाली और आत्मनिर्भर स्त्री है। जहां कहीं किसी औरत को दुख होता है उसके पास पहुँच जाती है। वह पढी–लिखी है, गाँव की बच्चियों को फ्री में पढ़ाती है। स्त्री पुरुष के भेदभाव पर प्रहार करती है, रूढ़ियों में फंसी औरतों को समझाती है कि वह अंधकार छोड़ उजाले में आए। भजुरामा के चचेरे भाई बलदेव ने अपनी पत्नी को जलाकर मार दिया था। यह बात पूरे गाँव वालों को पता है, परंतु कोई भी आगे बढ़कर गवाह नहीं देता। वंदना हमेशा ही उसे समझाती थी कि अपने हक की लड़ाई लड़ो। आगे बड़ों कानून का सहारा लो परंतु बलदेव की पत्नी चुप होकर अत्याचार सहती रही, अंतरू उसे मौत के घाट उतार दिया गया। इसी कारण उसे न्याय दिलाने के लिए वंदना को समय–समय पर कोर्ट जाना पड़ता है। वह कहती है कि– 'जब गाँव के मर्दों में हिम्मत बाकीं नहीं है, तो मुझे जाना ही पड़ेगा न। औरत का दर्द औरत नहीं समझेगी तो कौन समझेगी?'[10]

दिल्ली से आवश्यक कार्य के लिए वापसी का तार पाकर, अगले दिन निक्लने की तैयारी में दामोदर की मुलाक़ात पवित्रा और पार्वती से होती है। दोनों यह जानकर की अगले दिन दामोदर वापस जाने वाला है, उदास होते है। "जाना तो था ही। हाँ आप लोग भयानक सीमाओं के बीच जो मानकीय लड़ाई लड़ रही हैं वह बहुत मूल्यवान है। मैं आपके लिए कुछ कर सकूँगा तो मुझे प्रसन्नता होगी। आप मुझे निस्संकोच लिखा करें। मैं अपने अखबार के द्वारा आपकी लड़ाई में सहभागी बनूंगा। बल्कि आप

हमारे अखबार की संवाददाता बन जायें।"[11] वही प्रवीण और शिवकुमार अपना उल्लू सीधा करने के लिए दामोदर के पास आते है। प्रवीण अपने बारे में दामोदर के माध्यम से उसके पत्र में लेख छपवाना चाहता है ताकि उसे आसानी से लोग जाने और बड़े पार्टी से टिकट मिल जायें। शिव कुमार दामोदर के खेतों को खरीदना चाहता है। इस तरह का स्वार्थ से भरा हुआ गाँव को देख दामोदर का मन उदास हो जाता है और वह गाँव से तुरंत लौट जाना चाहता है। उसने जिस तरह के गाँव की कल्पना की थी वह पुरी तरह से बदल गया है, अब वह समय गया जब लोग गाँव के लोगों को अपना परिवार समझते थे, कई हद तक सामाजिक और नैतिक मूल्यों ने स्वार्थ को अपना लिया है। लोग केवल अब अपने बारे में सोचने लगे है। ग्रामीण समाज जो कभी प्रेम और एकता के लिए जाना जाता रहा था, अब परिवर्तन की दौर में ऐसा बदला हैं कि लोग स्वार्थी हो गए है। जहां गाँव में प्रवीण और शिवकुमार जैसे मतलबी लोग है तो पर पवित्रा, वंदना, भजुरामा, मंजुल जैसे लोगों से दामोदर को अब भी उम्मीद है की वे लोग गाँव की तस्वीर सही दिशा में बढ़ाने में सहायक है और इनके द्वारा गाँव में सकारात्मक बदलाव आयेगा।

निष्कर्ष

रामदरश मिश्र हिन्दी साहित्य के ऐसे साहित्यकार है जिन्होंने ग्रामीण अंचल को भीतर से जिया है। वे भले ही शहर में आकर बस गये हो परन्तु गाँव उनके भीतर से उनके आत्मा से कभी बाहर नहीं निकल पाया है। उनका साहित्य केवल कल्पना पर आधारित नहीं है, वे समाज के यथार्थ रूप को केंद्र में रखकर लिखते आयें है। उनके साहित्य में ग्रामीण अंचल का चित्रण दिखता है। वे स्थिर होकर नहीं बल्कि समय के साथ चलने वालों में से है। उन्होंने उपन्यासों के माध्यम से बदलते हुए ग्रामीण समाज का दर्पण दिखाया है। उसका यथार्थ रूप में चित्रण किया है। परिवर्तन जरूरी है, पर परिवर्तन के माध्यम से हमारी अपनी वास्तविक छवि और संस्कृति का लुप्त हो जाना घातक है। ग्रामीण समाज ही है जो हमारी भारतीय संस्कृति को बचायें हुए है। यदि गाँव–समाज में शहरीकरण का प्रभाव अत्यधिक बढ़ता गया तो गाँव को शहर बनने में समय नहीं लगेगा। बदलाव की आवश्यकता हर क्षेत्र समाज में है, पर हमारी संस्कृति हमारी धरोहर है जिसे बचाए रखना सभी की नैतिक जिम्मेदारी है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. रामदरश मिश्र रचनावली, खंडदृदो, हँसी ओठ पर आँखे नम है, पृ.293
2. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन,नयी दिल्ली,1996 , पृ.8
3. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.11
4. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996, पृ.13
5. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.33
6. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.42
7. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.42
8. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.94
9. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.95
10. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.91
11. रामदरश मिश्र, बीस बरस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,1996 , पृ.131